© 2018 IJSRSET | Volume 4 | Issue 7 | Print ISSN: 2395-1990 | Online ISSN : 2394-4099
Themed Section : Engineering and Technology

गाँधी जी का अस्पृश्यता उन्मूलन

डॉ. संजय कुमार सुमन
सलेमपुर,
जहानाबाद, बिहार, भारत।

वर्त्तमान मान भारतवर्ष में प्रत्येक वर्ग–समूह की एक अलग जीवन–पद्धति है। उनके जीने–रहने की अपनी अलग निराली दुनिया है। उनके जीविका के आधार, सांस्कृतिक वातावरण, आशाएँ एवं आकांक्षाएँ सबकुछ भिन्न है। यही वर्गवाद, प्रभुत्वसम्पन्न वर्ग के खिलाफ सामाजिक संघर्ष को जन्म देती है। सामाजिक ढ़ाँचे के परिवर्तन तक यह संघर्ष चलता रहता है।

हमारे देश में वर्ग के अलावा जाति प्रथा के जकड़न भी काफी मजबूत है। उच्च–नीच, छुआ–छूत आदि समाज में व्याप्त है। यहाँ गाँव में सम्पत्ति मुख्यतः भूमि उन लोगों के हाथ में जो उच्च जाति के कहे जाते हैं और उस भूमि पर मेहनत–मजदूरी करने वाले लोगों को छोटी, नीच, अछूत और दलित कहे जाते हैं। गरीब ब्राह्मण गरीबी के आधार पर अपने को कभी भी गरीब, डोम या चमार के नजदीक नहीं मानता, बल्कि जाति के नाते उसका दिल सदा धनी ब्राह्मण के साथ रहता है। आज हमारा सामाजिक जीवन जातिगत दमन, वर्ग, शोषण एवं वर्ग संघर्ष के ताने–बाने से बना हुआ है।

अमेरिका के नीग्रो से अधिक जटिल प्रश्न हमारे देश के दलितों का है। यह सही है कि वर्षों पहले हमने कानून में छूआछूत (अस्पृश्यता) मिटा रखी है। लेकिन हमारे जीवन से छुआछूत कब मिटेगा, इसका कोई ठिकाना नहीं है। कुएँ, तालाब या नल पर पानी लेना, होटल में बैठकर बर्त्तनों में खाना, सवारी पर बैठना, नाई या धोबी का सेवा लेना, कुर्सी और चारपाई (खाट, चौकी) पर बैठना आदि कई ऐसे मामले हैं जिनमें अनेक जगहों में अछूत आज भी अछूत ही है। इतना ही नहीं, कई जगह आज भी गाँव के बाबू का लड़का हरिजन या दलित की युवती लड़की या बहू पर अपना खुला अधिकार मानता है और उसके इस अधिकार के सामाजिक समर्थन भी मिलता है। आज छूत–अछूत जाति–पाति विस्फोटक रूप धारण करते जा रहा है। जातीय हिंसा में वृद्धि हुई है। दलित समस्या जाति व्यवस्था की देन है। इसलिए दलित आन्दोलन की प्रकृति अथवा स्वरूप कुछ भी हो, इसका लक्ष्य जाति विहीन समाज की स्थापना करना है। सैद्धान्तिक रूप से जाति व्यवस्था का विरोध सभी समय एवं युगों में विचारों व दार्शनिकों ने किया है। फिर भी व्यवहारिक रूप में यह सदैव बनी ही रही है। समाज का विभाजन कर्म अथवा श्रम के आधार पर किया गया था और सभी वर्ग एक–दूसरे से जुड़े हुए थे। इस बात का प्रमाण मिलता है कि इन वर्णों में पारस्परिक संक्रमण हो सकता था और प्रत्येक वर्ण समाज की समदिष्ट में एक अविभाज्य अंग के रूप में स्वीकृत था।[1] कालान्तर में मोटे अथवा श्रम साध्य कार्य करने वाले लोगों को अछूत, दलित, अस्पृश्य आदि कहने लगे। गाँधी जी से पूर्व भी अनेक

दार्शनिकों व समाज सुधारकों ने दलित उत्थान का प्रयास किया। छठी शताब्दी ई0पू0 के दो प्रसिद्ध धर्मोपदेशक बुद्ध तथा महावीर का प्रयास भी सराहनीय रहा है।

उन्नीसवीं शताब्दी में ब्रह्म–समाज ने और कालान्तर में प्रार्थना–समाज ने अस्पृश्यता की भावना की आधार शिला को ही अमान्य ठहराया और सामाजिक समानता का प्रतिपादन किया। विवेकानन्द ने भी अस्पृश्यता का सबल प्रत्याख्यान किया और वेदान्त के आधार पर यह उद्घोषणा की कि सभी प्राणियों में एक ही अनन्त आत्मशक्ति का निवास है। अस्पृश्यता को विवेकानन्द और गाँधी जी एक समाजिक अभिशाप मानते थे जिसका आध्यात्मिक, धार्मिक अथवा सामाजिक किसी प्रकार का औचित्य नहीं था। धार्मिक क्षेत्र में ब्राह्मणों के एकाधिकार के समाप्त करने में प्रवृत्त विवेकानन्द ने अन्तर्जातीय विद्वेष तथा संघर्ष के विरूद्ध सचेत रहने की आवश्यकता पर बल दिया।[2] गाँधी जी ने भी हिन्दू समाज में प्रचलित इस अमानवीय एवं अनुचित व्यवस्था को समाप्त करने के लिए अथक प्रयास किया।

गाँधी जी स्वभाव से संवेदनशील थे और बारह वर्ष की अवस्था में ही अस्पृश्यता की समस्या का ज्ञान उपज चुका था। उनकी माँ उन्हें घर में सफाई करने वाले मेहत्तर को तथा स्कूल में अस्पृश्य जाति के सहपाठियों को छूने से मना किया करती थी।[3] उस समय वे अपनी माँ के निर्देशों का पालन करते थे, किन्तु बड़े होने पर उन्हें समाज में व्याप्त इस सामाजिक अन्याय को देखकर अत्यन्त क्षोभ हुआ और उन्होंने सदैव अस्पृश्यता की खुलकर निन्दा की। इस प्रसंग में यह नहीं भूलना चाहिए कि स्वयं गाँधी जी को भेदभाव की नीति का सामना करना पड़ा था अस्पृश्यता के विरोध में। उनके भावना का अनुमान इससे लगाया जा सकता है कि यदि हिन्दू शास्त्रों में अस्पृश्यता का अनुमोदन है तो वे उनका भी परित्याग करने को तत्पर थे। उन्होंने सनातनियों से कहा है कि शास्त्रों की समग्र दृष्टि में तथा उनका सार अस्पृश्यता के व्यवहार को समर्पित नहीं करता। अस्पृश्यता को उन्होंने हिन्दू समाज का कलंक बताया और हिन्दू समाज का फोड़ा कहकर इसकी भर्त्सना की।[4]

एक अन्य अवसर पर गाँधी जी ने कहा है कि अस्पृश्यता रावण अथवा डायन के शैतानी कृत्यों से भी बड़ा राक्षस है।[5] उन्होंने कहा कि यदि कोई यह सिद्ध कर दे कि अस्पृश्यता हिन्दू धर्म तथा समाज का एक आवश्यक अंग है, तो उन्हें हिन्दू धर्म के विरूद्ध विद्रोह करने में भी हिचकिचाहट नहीं होगी।[6]

गाँधी जी का मानना है कि अस्पृश्यता की समस्या वर्णाश्रम व्यवस्था के साथ घनिष्ठ रूप से जुड़ी हुई है। वर्ण व्यवस्था की आदर्शवादी व्याख्या में सदैव यह मान्यता प्रतिष्ठित हुई है कि व्यक्ति की सामाजिक स्थिति उसके जन्म से नहीं, अपितु उसके गुण और कर्म से नियमित होती है और साथ ही व्यक्ति को अपने अनुसार व्यवसाय चयन की स्वतंत्रता है। वर्णाश्रम–संस्था को गाँधी जी ऐसी शक्ति के रूप में देखते थे, जिससे सामाजिक संतुलन की स्थापना होती हैं, वे मानते थे कि इन शक्तियों के दृढ़ बनाने के लिए अनुशासन की आवश्यकता है। गाँधी जी के अनुसार वर्ण व्यवस्था समाज से अनावश्यक तथा कटुता उत्पन्न करने वाली प्रतिस्पर्धा समाप्त करती है और भौतिकतावाद की बढ़ती हुई लालसा को नियन्त्रित करती है।[7] गाँधी जी स्पष्टतः वंशानुगत व्यवसाय को वर्ण का आधार स्वीकार किया है और वास्तव में उनकी यह मान्यता है कि अपने जीविकोपार्जन के लिए व्यक्ति को पैत्रिक व्यवसाय ही अपनाना चाहिए।[8] वे वर्ण की परिपाटी के हिन्दू धर्म का अभिन्न अंग मानते थे, यहाँ तक कि उन्होंने इसे धर्म का आविष्कार सत्य की निरन्तर गवेषणा का परिणाम कहकर व्याख्यायित किया है।[9] गाँधी जी किसी भी व्यवसाय को ऊँचा या नीचा नहीं मानते थे। अतएव उनके अनुसार वर्ण एवं अस्पृश्यता में कोई सीधा और अपरिहार्य संबंध मानने का कोई कारण नहीं था और सर्वथा सबको समान स्थान प्राप्त है।[10] मेहतरों के व्यवसाय के साथ जो हीनता की भावना जुट गई थी उसे

दूर करने के उद्देश्य से गांधी जी ने कहा कि प्रत्येक व्यक्ति स्वयं अपने शौचालय की सफाई करवाते थे और आश्रम में रहने वालों से आश्रम की सफाई स्वयं करने को कहा। यही नहीं मकान मालिक तथा आश्रम को आर्थिक अनुदान देने वालों की नापसन्दगी की परवाह न करते हुए उन्होंने आश्रम में एक अछूत परिवार को प्रवेश किया।[11] अछूत लोग गन्दे काम करते हैं उनको छूना स्वास्थ्य की दृष्टि से हानिकारक हो सकते हैं– इस तर्क के प्रत्युत्तर में गाँधी जी ने कहा कि– अपनी सन्तानों के संदर्भ में प्रत्येक व्यक्ति एक महेत्तर है तथा आधुनिक औषधि–विज्ञान का प्रत्येक विद्यार्थी एक चमार..... किन्तु हम उनके कार्यकलापों को पवित्र कर्म के रूप में देखते हैं।[12]

भारतीय समाज में अछूतों की दयनीय दशा के प्रति गाँधी जी के हृदय की पीड़ा उनकी इस अभिव्यक्ति में देखी जा सकती है– ''सामाजिक दृष्टि से वे कोढ़ी है, आर्थिक दृष्टि से उनकी दशा बदत्तर है और धार्मिक क्षेत्र उन्हें उन स्थानों पर प्रवेश की अनुमति नहीं जिन्हें लोग गलती से भगवान का घर कहते हैं।[13] गाँधी जी ने अछूतों के मन्दिरों में प्रवेश न दिए जाने का घोर विरोध किया। यद्यपि वे स्वयं मंदिर जाने में विशेष उत्साह नहीं रखते थे। अस्पृश्यता के निवारण के लिए गाँधी जी अछूतों के लिए मन्दिर प्रवेश के अपने आन्दोलन को बहुत अधिक प्रतीकात्मक महत्व प्रदान करते थे।[14] सितम्बर 1932 में गाँधी जी द्वारा किया गया बहुचर्चित अनशन हरिजन आन्दोलन एक अत्यन्त महत्वपूर्ण घटना है। 10 अगस्त, 1932 की अपनी उद्घोषणा द्वारा अंग्रेजी सरकार ने आगे आने वाले संवैधानिक अधिनियम में अछूत जातियों के लिए पृथक निर्वाचक मण्डल तथा उनके लिए निश्चित स्थानों की व्यवस्था रखी। इसके विरोध में 20 अगस्त को गाँधी जी ने आमरण अनशन किया। इस अवसर पर पत्र प्रतिनिधियों को दिए गए साक्षात्कार में उन्होंने कहा– ''जिसके लिए मैं जी रहा हूँ और जिसके लिए मुझे मृत्यु को ग्रहण करने में भी हर्ष होगा, वह है अस्पृश्यता की आमूल–चूल समाप्ति।''[15] गाँधी जी का उद्देश्य समाज में व्याप्त ऊँच–नीच की भावना को ही समाप्त कर अछूतों को हिन्दू समाज का अविच्छिन्न अंग बनाना था। इस प्रकार इस समस्या का उनके द्वारा प्रस्तुत निदान धर्म परिवर्तनों से अथवा सरकार की नीतियों से उत्पन्न निदानों से सर्वथा भिन्न था। ये समस्या की जड़ में पहुँच कर रोग का मूल नष्ट करना चाहते थे जिससे हिन्दू समाज के विविध घटकों में पूर्ण सामंजस्य स्थापित हो सके और उनमें किसी प्रकार की भेदभाव की भावना न रहने पाए। गाँधी जी मूलतः एक ऐसे समाज सुधारक थे जो हिन्दू समाज की पुरातन काल से चली आ रही एकता को विनष्ट किए बिना इसमें सुधार लाना चाहते थे। अस्पृश्यता को अपराध मानते थे तथा उनके विचार में यहा साँप हिन्दू समाज को डँसकर उसे मार डाले, इसके पहले ही इसे मार डालना चाहिए।[16] अछूतोद्धार के लिए गाँधी जी के द्वारा किए गए कार्य अत्यन्त प्रशंसनीय है।

सन्दर्भ :

1. पी0एच0प्रभु, हिन्दू सोशल ऑर्गेनाइजेशन, अध्याय–8
2. कम्पलीट वर्क्स ऑफ स्वामी विवेकानन्द, जि0–4, पृ0 246
3. तेन्दुलकर, महात्मा, जि02, पृ0 35–36
4. कम्पलीट वर्क्स जि0–13, पृ0 232; अपरंच, एम0के0 गाँधी, द रिमूवल ऑफ अनरचेबिलिटी, पृ0 191
5. नवजीवन दिनांक, 5.04.1921
6. गाँधी, समाज–सुधार : समस्या और समाधान, पृ0 581

7. एम0के0 गाँधी, माई वर्णाश्रम धर्म, पृ0 30, 38, 41, 42
8. समाज सुधार : समस्या और समाधान, पृ0 27–32
9. गाँधी, मेरे सपनों का भारत, पृ0 269
10. हरिजन, दिनांक – 18.02.1933
11. एन आटोबायोग्राफी, पृ0 299–300
12. तेन्दुलकर, महात्मा, जि0–3, पृ0 182
13. तेन्दुलकर, महात्मा, जि0–3, पृ0 182
14. सुनन्दा पटवर्धन, पूर्व, पृ0 124
15. कम्पलीट वर्क्स, जि0पृ0 118
16. समाज सुधार : समस्या और समाधान, पृ0 584